भारत में पंचायतीराज व्यवस्थाः इतिहास एवं विकास

* डॉ मनोज कुमार पाण्डेय

भारत में स्वशासी संस्था के रुप में ग्राम पंचायत का इतिहास सैकड़ों वर्ष पुराना है। परम्परागत रुप से 'पंचायत' शब्द का प्रयोग पाँच व्यक्तियों की एक सभा के लिए होता है, जिन्हें 'पंच–पाँच' की संज्ञा दी जाती है। यह सभा गांव के सामूहिक मामलों पर फैसले करती है। ग्रामवासियों का 'पंच' में इतना विश्वास रहता है कि वे इन्हें पंच–परमेश्वर कहते है। तथापि भारत में पंचायतों का इतिहास एवं विकास अनेक उतार–चढ़ावों से भरा रहा है।

स्वतंत्रता के पश्चात् विधान के रुप में समानता के सिद्धान्त पर आधारित सार्वजनिक न्यायिक व्यवस्था के अन्तर्गत पंचायतों को संवैधानिक गारंटी प्रदान की गई लेकिन स्वतंत्रता से पूर्व ही राष्ट्रीय राजनैतिक पटल पर महात्मा गाँधी के आगमन के साथ ही पंचायत के आदर्श पुनर्जीवित हो गये थे। महात्मा गांधी ने इस पर बल दिया कि पंचायतें एक विशिष्ट रुप में जीवंत शक्ति बन जायेंगी एवं भारत आत्मशासी सरकार चलायेगा। फलतः स्थानीय स्वशासन की व्यवस्था के रुप में पंचायत की अवधारणा राष्ट्रवादी आन्दोलन का महत्वपूर्ण मुद्दा बनी रही। ब्रिटिश काल के प्रारम्भ से ही पंचायतें स्थानीय प्रशासन की इकाई थीं परन्तु उन्हें सरकार के नियंत्रण में कार्य करना पड़ता था। जब भारतीय नेतृत्व ने राष्ट्रीय स्तर पर स्थानीय स्वशासन की मांग की तो ब्रिटिश सरकार ने सबसे निचले अथवा प्रारम्भिक स्तर पर स्वशासन की शक्तियाँ देना प्रारम्भ किया। ये स्तर थे, ग्रामीण क्षेत्र में ग्राम पंचायत और नगरीय क्षेत्र में नगर पालिका। इस हेतु विभिन्न राज्यों में भिन्न–भिन्न अधिनियम पारित किये गये। भारत शासन अधिनियम में प्रांतीय विधानमण्डलों को 'स्थानीय स्वशासन' के संदर्भ में विधान अधिनियमिता करने की शक्ति दी गई। इस शक्ति का प्रयोग करते हुए कई प्रांतों ने अधिनियम पारित कर पंचायतों को प्रशासन एवं दाण्डिक न्याय

* असिस्टेन्ट प्रोफेसर, विधि विभाग, जे.एन. (पी.जी.) कॉलेज, लखनऊ।

करने की शक्ति प्रदान की। प्रतिनिधि शासन की इकाई के रुप में इन स्थानीय निकायों के कार्यकरण में कमियों को दृष्टिगत रखते हुए स्वतंत्र भारत के संविधान निर्माता इससे संतुष्ट नहीं थे। स्वतंत्र भारत के केवल 40वें अनुच्छेद में राज्य के नीति निर्देशक तत्व के रुप में पंचायतों को भारतीय संविधान में स्थान दिया गया। जिसके अनुसार– ''राज्य ग्राम पंचायतों का संगठन करने के लिए कदम उठाएगा और उनको ऐसी शक्तियाँ एवं प्राधिकार प्रदान करेगा जो उन्हें स्वायत्त इकाई के रुप में कार्य करने के योग्य बनाने के लिए आवश्यक हों।''

यद्यपि संविधान के नीति–निर्देशक तत्व अपनी प्रकृति में सांकेतिक हैं तथापि सभी राज्यों ने पंचायती राज व्यवस्था के महत्व को स्वीकार किया है।

स्वतंत्रता के तत्काल बाद 2 अक्टूबर 1952 को ग्रामीण विकास की प्रक्रिया के रुप में सामुदायिक विकास योजना का शुभारम्भ किया गया लेकिन यह योजना जन–सहभागिता की कमी, पारदर्शिता के अभाव जैसे कारणों से पूर्ण रुप से सफल नहीं हो पाई। इस योजना की सीमित सफलता के कारणों को खोजने एवं मूल्यांकन हेतु सरकार ने एक अध्ययन दल ''बलवंत राय मेहता कमेटी'' की स्थापना की। इस कमेटी ने विकास योजनाओं में जन–सहभागिता बढ़ाने हेतु लोकतांत्रिक विकेन्द्रीकरण के सिद्धान्त पर आधारित संस्थाओं के निर्माण की संस्तुति की। इन्हीं संस्तुतियों के आधार पर भारत में त्रि–स्तरीय पंचायती राज व्यवस्था का गठन किया गया। यथा– 'ग्राम पंचायत' गांव के स्तर पर, पंचायत समिति प्रखण्ड के स्तर पर एवं 'जिला परिषद्' जिले के स्तर पर। अन्य शब्दों में, परिवारों के समूह पंचायत, पंचायतों के समूह प्रखंड तथा प्रखंडों के समूह जिला परिषद् की स्थापना करते हैं। अन्ततोगत्वा राष्ट्रीय विकास परिषद् ने बलवंतराय मेहता समिति की सिफारिशों को 12 जनवरी 1958 को अपनी स्वीकृति प्रदान कर दी। तत्कालीन प्रधानमंत्री पं0 जवाहर लाल नेहरु ने राजस्थान के 'नागौर' में 2 अकटूबर 1959 को पंचायती राज व्यवस्था का उद्‌घाटन

किया था। आगे चलकर इन संस्थाओं पर विचार करने एवं और अधिक प्रभावी बनाने हेतु 'अशोक मेहता समिति' का गठन किया गया। इस समिति ने पंचायती राज को द्वि–स्तरीय बनाने का सुझाव 1978 में प्रस्तुत कर दिया। प्रथम, प्रारम्भिक स्तर पर मंडल पंचायत तथा दूसरा, जिला स्तर पर जिला–परिषद्। राजनीतिक अस्थिरता के कारण इस संस्तुति को लागू नहीं किया जा सका एवं त्रि–स्तरीय पंचायती राज व्यवस्था यथावत् लागू रही।

ग्रामीण विकास मंत्रालय ने एम0एल0सिंघवी की अध्यक्षता में 1986 में एक समिति का गठन किया। इसका उद्देश्य पंचायती राज व्यवस्था की जाँच करना था। इस समिति ने ग्राम सभा को पुनर्जीवित करने तथा पंचायतों के नियमित चुनाव कराने पर बल दिया। इस समिति की संस्तुतियों को भी लागू नहीं किया जा सका।

विगत दो दशकों से चली आ रही पंचायतों की इस व्यवस्था के सभी राज्यों में मूल उद्देश्य समान थे लेकिन इनके अधिकार, कार्य, चुनाव करने के तरीकों में भिन्नता विद्यमान थी, इन संस्थाओं ने शक्ति एवं अधिकार संबंधी विवादों तथा प्रतिस्पर्धाओं को जन्म दिया, यह समाज के कमजोर वर्गों को लाभ प्रदान करने में पूर्णतः सफल नहीं हो पा रही थी एवं इनका संगठनात्मक आधार भी काफी कमजोर था। पंचायतों के चुनावों में अनियमितता विद्यमान थी, इनके किसी भी प्रकार के वित्तीय अधिकार नहीं थे तथा पंचायत प्रतिनिधियों पर सरकारी अधिकारियों का अंकुश था। इस प्रकार से पंचायती राज संस्थाओं में गतिरोध व पतन दीर्घ काल तक चलता रहा। परिणामस्वरुप 19वीं शताब्दी के नवें दशक में इन्हें पुनर्जीवित करने हेतु कदम उठाये गये।

भारतीय संविधान में 73वाँ संविधान संशोधन अधिनियम 1993 ऐसा ही एक प्रयास था। यह एक ऐतिहासिक प्रघटना थी। 73वें संशोधन अधिनियम ने पंचायतों की त्रि–स्तरीय व्यवस्था को संवैधानिक गारंटी प्रदान की। यह अधिनियम 1992 में पारित किया गया, 20 अप्रैल 1993 को इसे राष्ट्रपति ने सहमति प्रदान की एवं यह 24 अप्रैल, 1993 से प्रभावी हो गया।

यह संशोधन अधिनियम जनता को शक्ति सम्पन्न बनाने के सिद्धान्त पर आधारित है एवं पंचायतों को संवैधानिक मान्यता प्रदान करता है। यह लोकतांत्रिक–विकेन्द्रीकरण के सिद्धान्त पर आश्रित है अर्थात् यह लोकतंत्र के मूल सिद्धान्तों के आधार पर संस्थाओं एवं संगठनों में निर्णय करने के अधिकार में निचले वर्ग की सहभागिता सुनिश्चित करती है। इस अधिनियम के प्रमुख पक्ष निम्नांकित हैं–

1. यह पंचायतों को स्वशासी संस्था के रुप में स्वीकारता है।
2. यह पंचायतों को सामाजिक न्याय एवं आर्थिक विकास हेतु योजनायें बनाने एवं क्रियान्वित करने की शक्ति तथा उत्तरदायित्व प्रदान करता है।
3. यह अधिनियम 20 लाख से अधिक जनसंख्या वाले सभी राज्यों के मध्य और जिला स्तर पर समान त्रि–स्तरीय शक्ति सम्पन्न पंचायतों की स्थापना का प्रबन्ध करता है।
4. यह पंचायतों के संगठन, अधिकार, कार्यों, वित्तीय व्यवस्था, चुनावों एवं कमजोर वर्गों (अनुसूचित जाति, अनुसूचित जन जाति तथा महिलाओं) के लिए पंचायत के विभिन्न स्तरों पर आरक्षण की व्यवस्था करता है।

73 वाँ संविधान संशोधन अधिनियम मूलभूत लोकतंत्र की दिशा में क्रान्तिकारी कदम है जो कि पंचायतों को निश्चितता, निरन्तरता एवं शक्ति प्रदान करता है। इस संशोधन अधिनियम के अनुसार पंचायती राज व्यवस्था त्रि–स्तरीय है,

1. ग्राम स्तर,
2. प्रखंड या मध्य स्तर,
3. जिला स्तर।

पंचायत के सभी स्थान प्रत्यक्ष मतदान द्वारा भरे जाते हैं। निर्वाचकों को 'ग्राम सभा' कहा जाता है। 73वें संशोधन अधिनियम के अनुसार एक पंचायती क्षेत्र में आने वाले गांवों की मतदाता–सूची में दर्ज सभी लोग 'ग्राम

सभा' के नाम से जाने जाते हैं। यह इसलिए किया जाता है कि लोकतांत्रिक व्यवस्था की स्थापना होगी। प्रत्येक पंचायत का एक अध्यक्ष होता है जिसका चुनाव राज्य द्वारा पारित विधि के अनुसार होता है। राज्य की इस विधि में संघ और राज्य के विधान मंडलों के सदस्यों (संसद सदस्य, विधान सभा तथा विधान परिषद् सदस्य) के सम्मिलित होने के बारे में उपबंध होगा। परंतु यह ग्राम स्तर से ऊपर के लिए ही होगा।

संविधान के अनुच्छेद 243—घ के अनुसार, अनुसूचित जातियों और अनुसूचित जनजातियों के लिए आरक्षण होगा जो उनकी जनसंख्या के अनुपात में होगा।

प्रत्येक पंचायत में प्रत्यक्ष चुनाव से भरे जाने वाले कुल स्थानों में से 1/3 स्थान महिलाओं के लिए आरक्षित होंगे। राज्य, विधि द्वारा किसी भी स्तर की पंचायत में नागरिकों के पिछड़े वर्गों के पक्ष में स्थानों या पदों का आरक्षण कर सकता है।

पंचायती राज संस्थाओं का कार्यकाल 5 वर्ष का होगा। पांच वर्ष की अवधि समाप्त होने से पहले चुनाव हो जाने चाहिए। यदि पंचायत का अवधि से पूर्व विघटन हो जाता है, तो विघटन से 6 मास के अंदर ही चुनाव हो जाने चाहिए।

संविधान के अनुच्छेद 243—च के अनुसार, वे सभी व्यक्ति जो राज्य विधान मंडल के लिए निर्वाचित होने की योग्यता रखते हैं पंचायत का सदस्य होने के लिए योग्य होंगे।

संविधान के अनुच्छेद 243—छ—243—ज के अनुसार, राज्य विधान मंडल को यह शक्ति है कि वे पंचायतों को ऐसी शक्ति और प्राधिकार प्रदान करें जिससे वे स्थानीय स्वशासी संस्थाओं के रुप में कार्य कर सकें।

राज्य विधि द्वारा किसी पंचायत को कर, शुल्क एवं पथ कर वसूल करने एवं इकट्ठा करने का अधिकार दे सकता है। राज्य अपने द्वारा इकट्ठा किए हुए कर एवं शुल्क में से भी पंचायत को धन दे सकता है। राज्य की संचित निधि से भी पंचायत को अनुदान दिया जा सकता है।

संविधान के 73वें संशोधन के लागू होने की तारीख से एक वर्ष के भीतर और ततपश्चात् प्रत्येक पांच वर्ष के बाद राज्य सरकार पंचायतों की वित्तीय स्थित की समीक्षा करने के लिए वित्त आयोग की स्थापना करेगी। साथ ही वित्त आयोग की स्थापना के उद्देश्य निम्नलिखित के बारे में सिफारिश करने के लिए भी हैंः (क) ऐसे करों, शुल्कों, पथ करों और फीसों को दर्शाना जो पंचायतों को प्रदान की जा सकें, (ख) पंचायतों के लिए सहायता अनुदान, तथा (ग) पंचायतों की वित्तीय सिथति के सुधार के लिए उपाय बताना।

संविधान के अनुच्छेद 243–ट में पंचायतों के लिए राज्य निर्वाचन आयोग के गठन का प्रावधान है। आयोग स्वतंत्र बना रहे यह सुनिश्चित करने के लिए यह प्रावधान है कि चुनाव आयुक्त को उन्हीं आधारों पर और उसी प्रक्रिया से हटाया जा सकता है जिस प्रकार उच्च न्यायालय के न्यायाधीश को हटाया जा सकता है। अनुच्छेद 329 के अनुसार, चुनाव प्रक्रिया प्रारंभ हो जाने पर न्यायालय उसमें हस्तक्षेप नहीं कर सकता है।

73वें संविधान संशोधन विधेयक के बाद 11वीं अनुसूची बढ़ाई गई, जिसके अन्तर्गत निम्न विषयों या मदों को सम्मिलित किया गयाः

1. कृषि एवं कृषि–विस्तार (agricultural extension)।
2. भू–सुधार, भूमि सुधार कार्यक्रमों का क्रियान्वयन, भूमि चकबन्दी (land consolidation) और भूसंरक्षण।
3. लघु सिंचाई, जल प्रबंध, जल संचय कार्यक्रम
4. पशुपालन, डेयरी और मुर्गीपालन
5. मछली पालन
6. सामाजिक वानिकी और कृषि वानिकी
7. लघु वन उत्पाद
8. लघु उद्योग जिसमें खाद्य प्रसंस्करण उद्योग (food processing industry) भी शामिल है,
9. खादी, ग्रामीण और कुटीर उद्योग

10. ग्रामीण गृह–व्यवस्था (rural housing)
11. पेयजल
12. ईंधन और चारा
13. सड़कें, पुल जल–परिवहन और संचार के अन्य साधन।
14. ग्रामीण विद्युतीकरण जिसमें विद्युत वितरण भी शामिल है,
15. गैर परम्परागत ऊर्जा स्त्रोत
16. गरीबी–उन्मूलन कार्यक्रम
17. प्राथमिक और माध्यमिक शिक्षा
18. तकनीकी और व्यावसायिक शिक्षा
19. प्रौढ़ और अनौपचारिक शिक्षा
20. पुस्तकालय
21. सांस्कृतिक कार्यक्रम और गतिविधियाँ
22. बाजार और मेले
23. स्वास्थ्य और सफाई कार्यक्रम जिसमें अस्पताल, स्वास्थ्य केन्द्र और डिस्पेंसरी भी शामिल हैं
24. परिवार कल्याण महिला और बाल कल्याण
25. महिला और बाल कल्याण
26. सामाजिक–कल्याण जिसमें विकलांग कल्याण और मानसिक रुग्णता वाले लोग भी सम्मिलित है।
27. पिछड़े और कमजोर तबकों का विकास विशेषतः अनुसूचित जाति / जनजाति।
28. सार्वजनिक वितरण व्यवस्था
29. सामुदायिक सम्पत्तियों (community assets) की देखभाल

1993 के संवैधानिक संशोधन के बाद बहुत से राज्यों ने संविधान की 11वीं अनुसूची में दर्ज इन 29 कार्यों में से कई स्थानान्तरित (delegate) कर दिये। यद्यपि कार्यों का स्थानान्तरण तो अधिकांश राज्यों में हो गया, किन्तु फंड का स्थानान्तरण कुछ ही राज्यों में हुआ।

सारांँशतः कहा जा सकता है कि भारत में पंचायती राज व्यवस्था का विकास एक दीर्घ कालिक प्रक्रिया के रुप में हुआ है। यद्यपि पंचायतों के आदर्श प्राचीन काल से विद्यमान थे तथापि 73वें संशोधन ने उन्हें और अधिक व्यावहारिक एवं सशक्त बनाया है।

संदर्भ –

1. बसु, डी0डी0: 1999, भारत का संविधान–एक परिचय, वाधवा एण्ड कम्पनी, नागपुर।
2. भारतः 2012, प्रकाशन विभाग, सूचना और प्रसारण मंत्रालय, भारत सरकार।
3. ग्रोवर, बी0एल0 एवं यशपालः 1999, आधुनिक भारत का इतिहास, एस0 चन्द्र एण्ड कमपनी लि0, रामनगर, नई दिल्ली।
4. कश्यप, सुभाषः 1997, भारत का सांविधानिक विकास और संविधान, हिन्दी माध्यम कार्यान्वयन निदेशालय, दिल्ली विश्व विद्यालय, दिल्ली।